श्रीमते भार्गवाय परशुहस्ताय नमो नमः

मूर्त्तिरहस्यम्

तृतीयो भागः

श्रीभार्गवज्वालाप्रसादशर्म्मणा संगृहीतः

सागराख्यनगरे सत्यप्रकाशयन्त्रालये
सागरवेदाङ्कचन्द्रमिते १९४७ विक्रमाब्दे
मुद्रितः

सन् १८९० ईसवी

पहिली वार
६०० जिल्द

मूल्य प्रति पुस्तक
डाकव्ययसहित =)॥

इस यंत्रालय में जो पुस्तकें बिक्री के लिये विद्यमान हैं उनका सूचीपत्र

यजुर्वेद का ब्रह्मभाष्य संस्कृत

यह भाष्य अपूर्व अद्भुत और श्रुतियों के प्रमाण से भूषित है जो जिज्ञासु इसको देखता है फिर उसका मन उसके पठन मनन और विचार से विराग को नहीं पाता क्योंकि एक अर्थ में यज्ञों का वर्णन है दूसरे अर्थ में स्थूल सूक्ष्म कारण शरीरों को माया का बिकार जानकर मायामें प्रवेश का उपाय लिखा है और समाधि उत्थान भक्ति ज्ञान के द्वारा केद्वारा परमेश्वर के मिलाप का उपाय सिद्ध किया है समाधि उत्थान के मंत्रों को मनन और विचार करने से जो आनन्द प्राप्त होता वह लिखने में नहीं आता वह पठन मनन से ही अनुभव हो सक्ता है हमारे देश के पंडितों ने इस भाष्य को अनुमोदन किया वह तो उनका धर्मही है किन्तु आक्सफोर्ड निवासी मोक्षमूलरने भी इसकी बड़ी प्रशंसा की और इसकी प्रतियां विलायत में जाने लगीं इसके पहिले अर्थ का नाम अधिदैव दूसरे का नाम अध्यात्म है क़ीमत प्रति पुस्तक महसूल डांक सहित १०॥) है॥

यजुर्वेद का ब्रह्मभाष्य भाषा

यह संस्कृत भाष्य का भाषानुवाद है क़ीमत १०॥)

मूर्त्ति रहस्य पहिला भाग

इस मनोहर पुस्तक को चारों वेदों से संग्रह किया गया है इसमें ९ अध्याय हैं पहिले में ब्रह्म का निरूपण है दूसरे अध्याय में महा पुरुष का तीसरे अध्याय में भगवती का चौथे अध्याय में सृष्टि की उत्पत्ति का ५ अध्याय में अवतारों का ६ अध्याय में देवताओं का ७ अध्याय में मृन्मय मूर्त्ति की प्रतिष्ठा ८ अध्याय में मन्दिरस्थ पाषाण मय्यादि मूर्त्ति की प्रतिष्ठा ९ अध्याय में प्रश्नोत्तर द्वारा सब संशयों की निवृत्ति की है मोल्य प्रति पुस्तक ।=) डाकव्यय ।॥ है॥

श्रीगणेशायनमः ॐनमोभगवतेवासुदेवाय ॐश्रीकुलदेवेभ्योनमोनमः ॐश्रीकुलदेव्यैनमोनमः

अथश्रीमहापुरुषमूर्त्तेः प्रतिष्ठा

पुरुषोहनारायणोऽकामयत। अतितिष्ठेय ᳪ सर्वाणिभूतान्यहमेवेद ᳪ सर्व ᳪ स्यामिति स एतं पुरुषमेधं पञ्चरात्रं यज्ञक्रतुमपश्यत्तमाहरत्तेनायजत तेनेष्ट्वात्यतिष्ठत्सर्वाणि भूतानीद ᳪ सर्वमभवदति तिष्ठति सर्वाणि भूतानीद ᳪ सर्वं भवति य एवं विद्वान्पुरुषमेधेन यजते यो वैतदेवं वेद।

भाषार्थः

महानारायण का अवतार पुरी रूप शरीरों में शयन करने वाला जो नारायण है उसने इच्छा की कि मैं सब प्राणियों को अतिक्रमण कर स्थित होऊं और यह सब मैं ही हो जाऊं तब उसने पंचरात्र साधन वाले पुरुषमेध नाम यज्ञ को देखा उस यज्ञ को रचा उससे यजन किया उससे यजन कर सब प्राणियों को अतिक्रमण कर स्थित हुआ यह सब ब्रह्माण्ड आप ही हुआ उस प्रकार जो विद्वान इस विधि से पुरुषमेध यज्ञ द्वारा यजन करता है वह सब प्राणियों को अतिक्रमण कर स्थित होता है किन्तु यह सब ब्रह्माण्ड आप ही होता है परन्तु जो विद्वान इस यज्ञ को इसी प्रकार जानता

है वही इसके फलको पाता है महा पुरुष की सायुज्य को प्राप्त करता है नहीं तो यथार्थ ज्ञान से शून्य हिंसा परायण मनुष्य अविधिपूर्वक यजन कर नरक के अधिकारी होते हैं ॥१॥

तस्य त्रयोवि ᳪ शतिर्दीक्षाः ॥ द्वादशोपसदः पञ्च सुत्याः स एष चत्वारि ᳪ शदक्षरः स दीक्षोपसत्कश्चत्वारि ᳪ शदक्षरा विराड्विराजमभिसम्पद्यते ततो विराडजायत विराजो ऽअधि पूरुष इत्येषा वै सा विराडेतस्या ऽएवैतद्विराजो यज्ञं पुरुषं जनयति ॥२॥

भाषार्थः

उस पुरुषमेधयज्ञ की २३ दीक्षा (२३ तत्व सम्बन्धी होती हैं) १२ उपसद* (शरीर में १२ देवस्थान) पांच सुत्या (पञ्च ज्ञानेन्द्रियसंबंधिनी होती हैं वही ४० ज्ञान वाला दीक्षा आदि सहित यज्ञ है ४० अक्षर का विराट् छन्द होता है उस विराट् को उसी महा पुरुष में अनुभव करता है क्योंकि उसी महापुरुष से विराट् शरीर उत्पन्न हुआ और वही महापुरुष उस विराट् शरीर को अधिष्ठान करके विराट् पुरुष हुआ मंत्र में लिखा है (पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवीति यही) विराट् पुरुष महा पुरुष में लय होकर यज्ञ पुरुष महानारायण को यजमान के अनुभव में प्रकट करता है ॥२॥

ता वा ऽएताः । चतस्रो दशतो भवन्ति तद्यदेताश्चतस्रो दशतो भवन्त्येषां चैव लोकानामाप्त्यै

* मासा उपसदः आदित्यः प्रवर्ग्यो ऽमृतं तदादित्यं मासेषु प्रतिष्ठापयति १०।२।५।६

दिशांश्चेममेव लोकं प्रथमया दशा तानुवन्नन्त रिक्षं द्वितीयया दिवं तृतीयया दिशश्च चतुर्थ्यात थैवैतद्यजमान इममेव लोकं प्रथमया दशानाप्नो त्यन्तरिक्षं द्वितीयया दिवं तृतीयया दिशश्चतुर्थ्यै तावद्वाऽइदᳲं सर्वं यावदिमे च लोका दिशश्च स र्वं पुरुषमेधः सर्वस्याप्त्यै सर्वस्यावरुद्धै ॥ ३ ॥

भाषार्थः

दूसरी श्रुति में जो ४० संख्या है उसके ४ दशक हैं जो कि इन लोकों और दिशाओं की प्राप्ति के लिये होते हैं पूर्व विद्वानों ने पहि ले दशक से इस लोक को प्राप्त किया दूसरे से अन्तरिक्ष को तीसरे से स्वर्ग को चौथे से दिशाओं को – उसी प्रकार यजमान पहिले से इस लोक को दूसरे से अन्तरिक्ष को तीसरे से स्वर्ग को चौथे से दिशाओं को प्राप्त करता है इतना ही यह सब है जो कि ये लोक और दिशा हैं सब पुरुषमेध है सब की प्राप्ति और सब इन्द्रियआ दि के निरोधार्थ किया जाता है ॥ ३ ॥

एकादशाग्निषोमीयाः पशवः उपवसथे । ते षाᳲं समानं कर्मैकादश यूपा एकादशाक्ष रा त्रिष्टुब्वज्रस्त्रिष्टुब्वीर्यं त्रिष्टुब्वज्रेणैवैतद्वी र्येण यजमानः पुरस्तात्पाप्मानमपहते । ४ ।

११ अग्निषोमीय पशु (१० इन्द्रिय मन रूप) यज्ञ के दिन होते हैं उनके लिये ११ यूप होते हैं ११ अक्षर का त्रिष्टुप छन्द होता है त्रि ष्टुप् वज्र और बल है उसी वज्र और बल से यजमान पाप को आगे

से नाश करता है ॥ ४॥

एकादशिनाः सुत्यासु पशवो भवन्ति । एकादशाक्षरा त्रिष्टुब्वज्रस्त्रिष्टुब्वीर्यं त्रिष्टुब्वज्रो वै तद्वीर्येण यजमानः पुरस्तात्पाप्मानमपहते ॥ ५॥

भाषार्थः

सुत्याओं में ११ पशु (मन सहित १० इन्द्रिय) होते हैं ११ अक्षर का त्रिष्टुप् छन्द होता है त्रिष्टुप् वज्र और बल है उसी वज्र और बल से यजमान पाप को आगे से नाश करता है ॥ ५॥

यद्वेवैकादशिना भवन्ति । एकादशिनी वा ऽ इदꣳ सर्वं प्रजापतिर्ह्येकादशिनी सर्वꣳ हि प्रजापतिः सर्वं पुरुषमेधः सर्वस्याप्त्यै सर्वस्यावरुद्ध्यै ॥ ६॥

भाषार्थः

जो ११ (इन्द्रिय रूप पशु) होते हैं निश्चय यह सब ११ है प्रजापति भी ११ है प्रजापति ही सब है सब पुरुषमेध है सब की प्राप्ति और सब इन्द्रियों के निरोधार्थ यह यज्ञ होता है ॥ ६॥

स वा ऽ एष पुरुषमेधः पञ्चरात्रो यज्ञक्रतुर्भवति । पाङ्क्तो यज्ञः पाङ्क्तः पशुः पञ्च ऽ र्तवः संवत्सरो यत्किंच पञ्चविधमधिदैवतमध्यात्मं तदेनेन सर्वमाप्नोति ॥ ७॥

भाषार्थः

निश्चय यह पुरुषमेध नाम यज्ञ कर्म ५ ज्ञान वाला है इस कारण यज्ञ पंच सम्पति वाला है पशु पंच संपति वाला है संवत्सर भी ५ ऋतु वाला है इस कारण जो ५ प्रकार का अधिदैव और अध्यात्म है उस सब को इससे प्राप्त करता है ॥ ७ ॥

तस्याग्निष्टोमः प्रथममहर्भवति । अथोक्थ्यो ऽथातिरात्रो ऽथोक्थ्यो ऽथाग्निष्टोमः स वा ऽ एष उभयतोज्योतिरुभयतउक्थ्यः ॥ ८ ॥

भाषार्थः

उस पुरुषमेध में पहिला अंग अग्निष्टोम है फिर दूसरा अंग उक्थ्य अर्थात् अन्न है तीसरा अंग अतिरात्र अर्थात् आत्मा चौथा अंग उक्थ्य अर्थात् अन्न है पांचवा अंग अग्निष्टोम है इस कारण यह पुरुषमेध दोनों ओर ज्योति रूप और दोनों ओर से अन्न रखने वाला है ॥ ८ ॥

यवमध्यः पञ्चरात्रो भवति इमे वै लोकाः पुरुषमेध उभयतो ज्योतिषो वा ऽ इमे लोका अग्निनेत आदित्येनामुतस्तस्मादुभयतोज्योतिरन्नमुक्थ्य आत्मातिरात्रस्तद्यदेता ऽ उक्थ्यावतिरात्रमभितो भवतस्तस्मादयमात्मान्नेन परिवृढो ऽथ यदेष वर्षिष्टो ऽतिरात्रो ऽन्हां समध्ये तस्माद्यवमध्यो युते ह वै द्विषन्तं भ्रातृव्यमयमसे वास्ति नास्य द्विषन्भ्रातृव्य इत्याहुर्य एवं वेद ॥ ९ ॥

भाषार्थः

यह पांचज्ञानवाला पुरुष मेध यव मध्य अर्थात् मध्य में यवकी समान भारी होता है - ये लोक पुरुष मेध हैं ये लोक दोनों ओरसे ज्योति रखने वाले हैं अग्नि से नीचे की ओर सूर्य से ऊपर की ओर उस कारण उभयज्योति हैं उकथ्य अन्न है और अति रात्र आत्मा है सो जो ये अन्न आत्मा के दोनों ओर होते हैं उस कारण यह आत्मा अन्न से परिवृंहित है और जो यह अतिरात्र आत्मा है वह लोकों के मध्य स्थित है) - उस कारण यह मध्य कहलाता है यही अन्न आत्मा में युक्त होने पर द्वेषी शत्रु है दूसरा कोई इसका द्वेषी शत्रु नहीं है वेद ऐसा कहते हैं जो इसे इसी प्रकार जानता है वही फलभागी होता है न कि दूसरा ॥ ९॥

तस्यायमेव लोकः प्रथममहः । अयमस्य लोको वसन्त ऋतुर्यदूर्ध्वमस्माल्लोकादर्वाचीनमन्तरिक्षात्तद्द्वितीयमहस्तद्धस्य ग्रीष्म ऋतुरन्तरिक्षमेवास्य मध्यममहरन्तरिक्षमस्य वर्षाः शरदावृतू यदूर्ध्वमन्तरिक्षादर्वाचीनं दिवस्तच्चतुर्थमहस्तद्धस्य हेमन्त ऋतुर्द्यौरेवास्य पञ्चममहर्द्यौरस्य शिशिर ऋतुरित्यधिदैवतम् ।१०

उस पुरुष मेधका पहिला अंग यह लोक है इसकी वसन्त ऋतु है जो इस लोक से ऊपर और अन्तरिक्ष से नीचे है वह दूसरा अंग है इसकी ऋतु ग्रीष्म है इसका मध्यम अंग अन्तरिक्ष है इसकी ऋतु शारद और वर्षा है जो अन्तरिक्ष से ऊपर और स्वर्ग से नीचे

है वही इसका चौथा अङ्ग है इसकी ऋतु हेमन्त है इसका पांचवां अ
ग स्वर्ग है इसकी शिशिर ऋतु है यह अधिदैव का वर्णन हुआ॥१०॥

अथाध्यात्मम्। प्रतिष्ठैवास्य प्रथममहः प्र
तिष्ठोऽस्य बसन्त ऋतुर्यदूर्ध्वं प्रतिष्ठाया
अवाचीनं मध्यात्तद्द्वितीयमहस्तद्धस्य ग्री
ष्म ऋतुर्मध्यमेवास्य मध्यममहर्मध्यम
स्य बर्षाशरदावृतूयदूर्ध्वं मध्यादवाचीनꣳ
शीर्ष्णस्तच्चतुर्थमहस्तद्धस्य हेमन्त ऋतुः
शिर एवास्य पञ्चममहः शिरोऽस्य शिशिर
ऋतुरेवमिमे च लोका संवत्सरश्चात्मा च
पुरुषमेधमभिसम्पद्यन्ते सर्वं वाऽइमे लो
काः सर्वꣳ संवत्सरः सर्बमात्मा सर्वं पुरुष
मेधः सर्वस्याप्त्यै सर्वस्यावरुद्ध्यै। १३। ६।
१।११॥

भाषार्थः

अब अध्यात्म को कहते हैं इस पुरुषमेध का प्रथम अंग प्रतिष्ठा
अर्थात् मूल चक्र है प्रतिष्ठा ही बसन्त ऋतु है जो प्रतिष्ठा से ऊपर
और मध्य अर्थात हृदय से नीचे है वह नाभि नाम दूसरा अंग है वही
इसकी ग्रीष्म ऋतु है मध्य अर्थात् हृदय इसका तीसरा अंग है वही
इसकी बर्षा और शरद ऋतु है जो मध्य से ऊपर और शिर से नीचे है
वह भ्रकुटिमण्डल इसका चौथा अंग है वही इसकी हेमन्त ऋतु है
इसका पांचवां अंग शिर ही है और शिर ही इसकी शिशिर ऋतु है इस
प्रकार ये लोक संवत्सर और आत्मा पुरुषमेध को प्राप्त करते हैं ये लो

क सर्व रूप है संवत्सर सर्व रूप है आत्मा सब है पुरुष मेध सर्वरूप है सबकी प्राप्ति और सब इन्द्रियों के निरोधार्थ होता है ॥ ११ ॥

१३ काण्ड की अध्याय ६ का पहिला ब्राह्मण समाप्त हुआ

अथ यस्मात्पुरुषमेधो नाम । इमे वै लोकाः पूरयमेव पुरुषो योऽयं पवते सोऽस्यां पुरि शेते तस्मात्पुरुषस्तस्य यदेषु लोकेष्वन्नं तदस्यान्नं मेधस्तद्यदस्यै तदन्नं मेधस्तस्मात्पुरुषमेधोऽथो यदस्मिन्मेध्यान्पुरुषानालभते तस्माद्वेव पुरुषमेधः ॥ १ ॥

भाषार्थः

अब पुरुषमेध की निरुक्ति को कहते हैं ये लोक पूः अर्थात् शरीर हैं जो इसमें शयन कर्त्ता है वह समष्टि प्राण रूप पुरुष है इन लोकों में जो अन्न है वह इसी का अन्न मेध (पवित्र) है जो इसका अन्न मेध है उस कारण पुरुष मेध है जो इसके मध्य मेध्य पुरुषों को महापुरुष में युक्त करता है उस कारण पुरुष मेध नाम कहाता है ॥ १ ॥

तान्वै मध्यमेऽहन्नालभते । अन्तरिक्षं वै मध्यममहरन्तरिक्षमु वै सर्वेषां भूतानामायतनमथो अन्नं वा एते पशव उदरं मध्यममहरुदरेण तदन्नं दधाति ॥ २ ॥

भाषार्थः

उन पशुओं को मध्यम अंग के बीच महापुरुष में युक्त करता है निश्च
य अन्तरिक्ष मध्यम अंग है और अन्तरिक्ष ही सब प्राणियों का स्थि
ति स्थान है और ये पशु अन्न रूप हैं और मध्यम अंग उदर है सो उद
र में अन्न को धारण करता है॥२॥

तान्वै दश दशालभते। दशाक्षरा विराड्विराड्
कृत्स्नमन्नं कृत्स्नस्यैवान्नाद्यस्यावरुद्ध्यै॥३

भाषार्थः

उन दश दश पशुओं को युक्त करता है क्योंकि विराट् छन्द दशअ
क्षर का होना है और विराट् ही पूरा अन्न है सम्पूर्ण अन्न के निरो
धार्थ ही ऐसा करता है॥३॥

एकादश दश तस्मालभते। एकादशाक्षरा
त्रिष्टुब्वज्रस्त्रिष्टुब्वीर्यं त्रिष्टुब्वज्रेणैवैतद्वीर्ये
णा यजमानो मध्यत पाप्मानमपहते॥४॥

भाषार्थः

दशमे यूप से ११ पशु को युक्त करता है ११ अक्षर का त्रिष्टुप छन्द
होता है त्रिष्टुप वज्र और वल है यजमान उस वज्र और वल के द्वा
रा ही मध्य से पाप को नष्ट करता है॥४॥

अष्टाचत्वारिंशतं मध्यमे यूपऽआलभते।
अष्टाचत्वारिंशदक्षरा जगती जागताः पश
वो जगत्यैवास्मै पशूनवरुन्द्धे॥५॥

भाषार्थः

मध्यम यूप में ४८ पशु को नियुक्त करता है जगती छन्द ४८ अक्ष

रका होता है पशु जागत नाम है जगती द्वारा ही इसके लिये पशु ओं का निरोध करता है ॥ ५ ॥

एकादशैकादशैतरेषु । एकादशाक्षरा त्रिष्टुब्वज्रस्त्रिष्टुब्वीर्यं त्रिष्टुब्वज्रेणैवैतद्वीर्येणाय्रजमानोऽभितः पाप्मानमपहते ॥ ६

भाषार्थः

११ यूप से लेकर प्रत्येक यूप पर ११ पशु को नियुक्त करता है ११ अक्षर का त्रिष्टुप् छन्द होता है त्रिष्टुप् वज्र और बल है यजमान उस वज्र बल के द्वारा चारों ओर से पाप को नष्ट करता है ॥ ६ ॥

अष्टाऽउत्तमानालभते । अष्टाक्षरा गायत्री ब्रह्म गायत्री तद्ब्रह्मैवैतदस्य सर्वस्योत्तमं करोति तस्माद्ब्रह्मास्य सर्वस्योत्तममित्याहुः ७

भाषार्थः

व्यष्टि पशुओं को समष्टि पशुओं में युक्त करने पर ८ उत्तम पशु शेष रहते हैं जिन कोई सोपाधिक रहते हैं उनको महा पुरुष में युक्त करता है ८ अक्षर की गायत्री है गायत्री ब्रह्म है सो ब्रह्म को ही इस सब का उत्तम करता है उस कारण वेदों ने कहा है ब्रह्म ही इस सब का उत्तम है यहां इतना विवेक अवश्य चाहिये कि ब्रह्म और महापुरुष एक ही हैं ॥ ७ ॥

ते वै प्राजापत्या भवन्ति ब्रह्म वै प्रजापतिर्ब्रह्मो हि प्रजापतिस्तस्मात्प्राजापत्या भवंति ८

भाषार्थः

वे ८ उत्तम पशु ब्रह्म का अवतार होते हैं क्योंकि ब्रह्म ही प्रजापति अ
र्थात् महा पुरुष है ब्रह्म का रूप ही महा पुरुष है उस कारण वे उत्त
म पशु महा पुरुष की ही कला होते हैं ॥ ८ ॥

सर्वेपशूनुपाकरिष्यन् । एतास्तिस्रः सावि
त्रीराहुतीर्जुहोति देवसवितस्तत्सवितुर्वरे
ण्यं विश्वानि देवसवितरिति सवितारंप्रीणा
तिसोऽस्मै प्रीत एतान्पुरुषान्प्रसौति तेनप्र
सूतानालभते ॥ ९ ॥

भाषार्थः

यह यजमान पशुओं को पुरुष मेंउपयुक्त करना चाहता इन
तीन सावित्री द्वारा आहुति को होमता है मानो सर्व प्रेरक परमे
श्वर को प्रसन्न करता है वह प्रसन्न परमेश्वर इन पुरुषों को प्रेरि
त करता है उससे प्रेरित पुरुषों को नियुक्त करता है उसके मंत्र
यजुर्वेद अ० ३० ॥ ९ ॥

देवंसवितः प्रसुव यज्ञम्प्रसुवयज्ञपतिम्भगो
य दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्नः पुनातु वाच
स्पतिर्वाचंनः स्वदतु १ तत्सवितुर्वरेण्यम्भ
र्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् २
विश्वानि देवसवितुर्दुरितानि परासुव यद्भ
द्रन्तन्न आसुव ३ विभक्तारं ७ हवामहे वसो
श्चित्रस्य राधसः सवितारन्नृचक्षसम ४
आज्येन हुत्वाथ पुरुषान्नियुनक्ति तस्य मन्त्राः

घृतसे होम करके पुरुषोंको नियुक्त करता है उसके मंत्र
ब्रह्मणे ब्राह्मणं क्षत्राय राजन्यं मरुद्भ्यो वैश्यं
तपसे शूद्रं तमसे तस्करं नारकाय वीरहणं
पाप्मने क्लीवमाक्रयाया ऽअयोगूं कामाय पुं
श्चलूमतिक्रुष्टाय मागधम् ॥ ५ ॥ ब्रह्मणे ब्राह्म
णमालभते। ब्रह्म वै ब्राह्मणो ब्रह्मैव तद्ब्रह्मणा
समर्धयति क्षत्राय राजन्यं क्षत्रं वै राजन्यः क्ष
त्रमेव तत्क्षत्रेण समर्धयति मरुद्भ्यो वैश्यं वि
शो वै मरुतो विशमेव तद्विशा समर्धयति त
पसे शूद्रं तपो वै शूद्रस्तप एव तत्तपसा सम
र्धयति श० १३। ६। २। १०

अस्याध्यायस्य व्याख्या ब्राह्मणे त्वेतावतैवातः परं स्वकी
य मत्या व्याख्यास्यामः। तस्करश्चौर्यं तामसं कर्म करो
ति तं तमोगुणाय नियु० वीरस्य हन्ता नरकार्हस्तं नरका
धिपतये नियुनक्ति क्लीवः पापात्मा तं पाप्मने नियुन
क्ति। अयसो बन्धनस्य गन्ता बंधनार्हस्तमपरायै नियु
नक्ति। आसमन्तात्क्रयव्यापारोपस्यां सा ऽ परा। व्य
भिचारी कामात्मा तं कामाय नियुनक्ति। मायया प्राप्तस्य
भोगस्य धारकं पुरुषं संसाराय नियुनक्ति। अतिनिन्दितः
संसारोऽतिक्रुष्टः क्रुशआक्रोषे। ५।

भाषार्थः

ब्रह्मा के लिये ब्राह्मण को नियुक्त करता है ब्राह्मण ब्रह्म ही है सो ब्र

ह्मा को ब्राह्मण से समृद्ध करता है क्योंकि ब्राह्मण ब्रह्मा के ही अंश हैं ब्रा
ह्मा वै जायते पुत्रः उसमें यह श्रुति प्रमाण है विष्णु के लिये क्षत्री
को नियुक्त करता है क्योंकि वह उसी का अंश है दोनों का कर्म भी
प्रजा पालन है सो क्षत्र को क्षत्र से समृद्ध करता है वैश्य को मरुद्गणों
के लिये नियुक्त करता है क्योंकि मरुद्गण वैश्य कर्मा हैं सो वैश्यवर्ग
को वैश्य से ही समृद्ध करता है सेवक शूद्र तपरूप है क्योंकि सेवा
ही उसका तप है सो तप को तप से ही समृद्ध करता है इस पशु अ-
ध्याय की व्याख्या ब्राह्मण में यहां तक ही है इससे आगे अपनी बु
द्धि के अनुसार व्याख्या करेंगे क्योंकि ब्राह्मण ही वेदों का मुख्य
भाष्य है जब उसमें नहीं तो सिद्ध हुआ कि पूर्वाचार्यों ने भी बुद्धया
नुसार व्याख्या की सो अब भी करते हैं वेद की मुख्य व्याख्या वेद
ही है। चौर तामस कर्म चोरी को करता है उसको तमोगुण के लि
ये नियुक्त करता है वीर का हन्ता नरक योग्य है उसको नरकाधि
प के लिये नियुक्त करता है क्लीव पापात्मा है उसे पाप पुरुष के
लिये नियुक्त करता है जो पुरुष बंधन योग्य है उसे अपरप्रकृति
के लिये नियुक्त करता है व्यभिचारी कामात्मा है उसको काम के लि
ये नियुक्त करता है भोगी पुरुष को संसार के लिये नियुक्त करता है ५

नृत्ताय सूतङ्गीताय शैलूषन्धर्माय सभाचर
न्नरिष्ठायै भीमलन्नर्माय रेभꣳ हसाय कारिमा
नन्दाय स्त्रीषखम्प्रमदे कुमारीपुत्रम्मेधायै र
थकारन्धैर्याय तक्षाणम् ॥ ६ ॥

सूभेरशो भेरणश्यक्ति मन्तं नर्त्तकं पुरुषं नृत्ताय देवाय नियुक्त

क्तितालधरं पुरुषं गीताय देवाय नि० धर्मरक्षायै सभाचरं पुरुषं धर्माय देवाय नि० संसारभयास्पदं पुरुषं संसारसत्तायै नि० नरस्य जीवात्मनः पत्नी नरी बुद्धिस्तस्यां स्थितायाः संसारसन्नासा नरिष्ठा। बहुभाषिणं पुरुषं नर्माय परिहासाय नि० कामशत्रुं पुरुषं हंसायात्मने नि० स्त्रियाः सखं पुरुषमानंदाय नि० मिथ्यात्वेन यस्याः सत्यतिर्न विद्यते सा ऽपरा कुमारी तस्याः पुत्रं भ्रान्तिरूपं पुरुषमहङ्काराय नि० योगरथस्य कर्त्तारं योगिनं पुरुषं मेधायै नि० तक्षतन्नू करणे स्वात्मानं मायाविकारेभ्यः पृथक्कर्त्तारं पुरुषं धैर्याय नि० ॥ ६ ॥

भाषार्थः

नर्त्तक पुरुष को नृत्य देवता के लिये नि० तालधारी पुरुष को गीत देवता के लिये नि० धर्म रक्षा निमित्त सभाचर पुरुष को धर्म देवता के लिये नि० संसार भययुक्त पुरुष को संसार सत्ता के लिये नि० बहुभाषी पुरुष को परिहास के लिये नि० । काम शत्रु पुरुष को आत्मा के लिये नि० स्त्री सखा पुरुष को आनन्द के लिये नि० अपरा के पुत्र भ्रान्ति रूप पुरुष को अहंकार के लिये नि० योगरथ के कर्त्ता योगी को मेधा के लिये नि० माया विकारों से अपने आत्मा को पृथक् करने वाले पुरुष को धैर्य के लिये नि० ॥ ६ ॥

तपसे कौलालं मायायै कर्मारꣳ रूपाय मणिकारꣳ शुभे वपꣳ शरव्याया इषुकारꣳ हेत्यै धनुष्कारं कर्मणे ज्याकारं दिष्टाय रज्जुसर्जं मृत्यवे मृगयुमन्तकाय श्वनिनम् ॥ ७ ॥

कौलः कुलाचारोऽलंभूषणंयस्य तं पुरुषं तपसेनि० कर्मै
वारमलंभूषणंयस्यन भक्ति ज्ञाने तं पुरुषं मायायै नि०
मणि कारत्न कर्त्तारं पुरुषं रूपायनि० वंश्राणां पाति
तं प्राणायाम कर्त्तारं पुरुषं मंगलायनि० जीवं प्रारब्ध
त्करोति तं पुरुषं लक्ष्य रूपाय ब्रह्मणे नि० प्रणवं धनुः
करोति तं पुरुषं वज्ररूपब्रह्मा कारप्रज्ञा शक्त्यै नि० तु
द्धिंज्या रूपां करोति तं पुरुषमैश्वरकर्मणे नि० वंधहेतु
कर्म कर्त्तारं पुरुषं भाग्यायनि० व्याधरूपं पुरुषं मृत्य
वेनि० विषय वासना पालकं पुरुषमन्तकायनि० ॥

न॒दीभ्यः पौञ्जिष्ठमृक्षीकाभ्यो नैषादम्पु
रुषव्याघ्राय दुर्मदङ्ग न्धर्वाप्सरोभ्यो व्रात्य
मप्रयुग्भ्यउन्मत्तꣳ सर्पदेवजनेभ्यो ऽप्रति
पद्मयेभ्यः कितवमीर्यताया ऽअकितवम्पि
शाचेभ्यो विदलकारींयातुधानेभ्यः कण्ट
कारीम् ॥ ८॥

पुंपुरुषं जयतीति पुञ्जिरिन्द्रिय समूहस्तत्रस्थं पुरुष
न्नदीभ्यो नि० मनो वैसमुद्र इति श्रुत्या नद्यः समष्टी
न्द्रियरूपिण्यः। निरन्तरं सीदति पापमत्र स निषादो
ऽहंकारस्तस्यात्मज रूपं पुरुषमृक्षतुल्य हिंस्रकेभ्यः
रुद्रेभ्यो नि० दुर्मदं पुरुषं रुद्रायनि० नृत्यगीतादिग्रा
म्य सुखासक्तं पुरुषं गन्धर्वाप्सरोभ्यो नि० उन्मत्तं पुरु
षं संसार संयोग वद्ध्योदेवेभ्यो नि० युज वन्धने। ज्ञान

शून्यं पुरुषं देव मनुष्य संबंधि लोकेभ्यो नि० सर्पो वै लोका इतिश्रुतेः द्यूतकारं पुरुषं प्राक्तन कर्मभ्यो नि० अद्यूत कारं ध्यानमौनादि चर्यायै नि० पतिव्रत खण्डिनीस्त्रियं पिशाचेभ्यो नि० कुटुंबाय दुःखदां — स्त्रियं यातुधानेभ्यो नि०॥ ८॥

भाषार्थः कुलाचारवान् पुरुष को तप के लिये नि० जो कर्म ही करता है भक्ति ज्ञान से शून्य है उसे माया के लिये नि० रत्न कर्त्ता को रूप के लिये नि० प्राणायाम कर्त्ता को मंगल के लिये नि० जो जीवात्मा को वाण तुल्य करता है उसे ब्रह्म के लिये नि० जो प्रणव को धनुष करता है उसे ब्रह्माकार मज्ञा शक्ति के लिये नि० जो बुद्धि को ज्यावनाता है उसे ऐश्वर कर्म के लिये नि० बंधन हेतु कर्म कर्त्ता को भाग्य के लिये नि० व्याध रूप पुरुष को मृत्यु के लिये नि० विषयी पुरुष को अन्तक के लिये नि०॥७॥ इन्द्रिय सेवी को समष्टि इन्द्रिय रूप नदियों के लिये नि० अहंकार पुरुष को रुद्रों के लिये नि० दुर्मद पुरुष को रुद्र के लिये नि० नृत्य गीत आदि ग्राम्य सुख में आसक्त पुरुष को गन्धर्व अप्सराओं के लिये नि० उन्मत्त पुरुष को संसार संयोगी देवताओं के लिये नि० ज्ञान शून्य पुरुष को देवता मनुष्य सम्बन्धी लोकों के लिये नि० द्यूत कर्त्ता को प्राक्त न कर्मों के लिये नि० द्यूत त्यागी को ध्यान मौन आदि चर्या के लिये नि० अपतिव्रता स्त्री को पिशाचों के लिये नि० कुटुंब पीडक स्त्री को यातुधानों के लिये नि०॥ ८॥

सन्धये जारङ्गेहायोपपतिमार्त्यै परिवित्तन्निर्ऋ

त्यै परिविविद्वानमराध्या ऽ णदिधिषुपतिनिष्कं त्यै पे शास्त्करी थं संज्ञां नायस्मरकारीभ्रं कामोद्यां योपुसदं वर्णा यानुरु धुम्वलायोपद्राम्॥ ८॥

अशास्त्रीय कामासक्त्या जरा संपन्नं पुरुष मपरायै नि॰ संज्ञी वंधियति सासन्धिरपरा शक्तिः। व्यभिचारिणं पुरुषं ब्रह्माण्डायनि॰ वित्त त्यागे वर्णाश्रम धर्मत्यागिनं पुरुष मार्त्ति रूपापरायैनि॰ समन्ताद्विविधदानवन्तंपुरुषंसत्य रूप पराशक्त्यै नि॰ महा बुद्धेः पतिं पुरुष माराधन योग्यै पराशक्त्यैनि॰ एधवृद्धौ। रूपाणां वालानांजननी स्त्रियं जगतोत्पादक परा शक्त्ये नि॰ कुत्सित काम विद्वेष्टी स्त्रियंब्रह्म ज्ञानाय नि॰ कामसमीपस्थं पुरुषंप्रकामोद्यायनि॰ इष्टानुसारं पुरुषं रक्त श्याम श्वेत वर्णाय परमेश्वराय नि॰ उपायन दातारं पुरुषं वलाय विराजाय नि॰॥ ८॥

भाषार्थः॥ शास्त्र विरुद्ध कामासक्ति से जरा संपन्न पुरुष को अपराके लिये नि॰ व्यभिचारी पुरुष को ब्रह्माण्ड के लिये नि॰ वर्णाश्रम धर्म त्यागी पुरुष को आर्त्ति रूपा अपरा के लिये निपुक्त करता है विविध दानी पुरुष को सत्य रूप परा शक्ति के लिये नि॰ महा बुद्धिमान् पुरुष को आराधन योग्य परा शक्ति के लिये नि॰ सन्तान वती स्त्री को जगतोत्पादक परा शक्ति के लिये नि॰ कुत्सित काम की द्वेष्टी स्त्री को ब्रह्म ज्ञान के लिये नि॰ काम समीपस्थ पुरुष को प्रकामोद्य के लिये नि॰ इष्टानुसारी पुरुष को ब्रह्म

विष्णु महेशरूप परमेश्वर के लिये नि० उपायन दाता पुरुष को विराट् पुरुष के लिये नि०॥ ६॥

उत्सादेभ्यः कुब्जम्प्रमुदे वामनन्द्वार्भ्यः स्रामछं स्वप्नायान्धमधर्माय बधिरम्पवित्राय भिषजं म्प्रज्ञानायनक्षत्रदर्शमाशिक्षायै प्रश्निनमुपशिक्षाया ऽअभिप्रश्निनं म्मर्यादायै प्रश्नविवाकम्॥ १०॥

(क) कामः (उ) मनः (ब) कामात्मिका बुद्धिस्तासु जन्मसंस्कारो यस्य तं पुरुषं परित्यागेभ्यो नि० विष्णुवत्कामाद्यसुरनाशकं पुरुषमानन्दस्वरूपाय ब्रह्मणे नि० योगेन गतिमन्तं पुरुषं मोक्षद्वार्भ्यो नि० विवेकनेत्रहीनं पुरुषं स्वप्नाय नि० धर्मशास्त्रश्रवणरहितं पुरुषमधर्माय नि० संसाररोगनाशकं पुरुषं पवित्रायात्मने नि० नक्षत्राणां लोकानां द्रष्टारं पुरुषं प्रज्ञानाय नि० अध्यात्मसंबंधि प्रश्नकर्त्तारमाशिक्षायै नि० अधिदैवसम्बन्धिप्रश्नकर्त्तारमुपशिक्षायै नि० अधिभूतसंबन्धिप्रश्नस्य वक्तारं पुरुषं मर्यादायै नि०॥ १०॥

अर्मेभ्यो हस्तिपञ्जवायाश्वपम्पुष्ट्यै गोपालं वीर्यायाविपालन्तेजसे ऽजपालमिरायै कीनाशं कीलालाय सुराकारम्भद्राय गृहपछं श्रेयसे वित्तधमाध्यक्षायायानुक्षत्तारम्॥ ११॥

भक्तरक्षणाय हस्तोयस्य स अन्तर्यामी पुरुषस्तं ध्याने रक्षति यस्तं पुरुषं ब्रह्म विष्णु महेशेभ्यो नि० (अ) विष्णुः

(२) रुद्रः (म०ब्रह्मा)। अभ्वं मानस सूर्यं हृदये पातितं पुरुषं योगवेगाय नि० असौ वा ऽआदित्य एषो ऽश्वः श॰ ६।३। १।२९। इन्द्रिय रक्षकं पुरुषं योग पुष्ट्यै नि० प्राणायामे प्राण रक्षकं पुरुषं योग वलाय नि० महावाचां रक्षकं पुरुषं तेजसे नि० वाग्वा ऽअजः श॰ ७।५।२।२१ कर्षुकं पुरुषं पृथिव्यै नि० भूतात्मानं पुरुषं संसाराय नि० कीलवन्धने - शरीरं सुराग्रहाः श॰ १२।७।३।१६ शरीर रूप गृहस्य पालकं जीवात्म पुरुषं भद्र पुरुषाय नि० योग धन धारकं पुरुषं श्रेयसे नि० मनः पुरुष मनु भवाय नियुनक्ति॥९

भाषार्थः॥ मन वुद्धि कामासक्त पुरुष को परित्यागों के लिये नि० विष्णु समान कामादि असुरों के नाशक पुरुष को आनंद स्वरूप ब्रह्म के लिये नि० योग से गतिमान पुरुष को मोक्षद्वारों के लिये नि० विवेक नेत्र हीन पुरुष को स्वप्न के लिये नि० धर्म शास्त्र श्रवण रहित पुरुष को अधर्म के लिये नि० संसार रोग नाशक पुरुष को पवित्रात्मा के लिये नि० लोक द्रष्टा पुरुष को प्रज्ञान के लिये नि० अध्यात्म सम्बन्धी प्रश्न कर्त्ता को आ शिक्षा के लिये नि० अधि दैव सम्बन्धी प्रश्न कर्त्ता को उप शिक्षा के लिये नि० अधिभूत सम्बन्धी प्रश्न वक्ता को मर्यादा के लिये नि०॥ १०॥ अन्तर्यामी का ध्यान करने वाले को ब्रह्म विष्णु महेशों के लिये नि० हृदय में मानस सूर्य के रक्षक को योग वेग के लिये नि० इन्द्रियों के रक्षक को योग पुष्टि के लिये नि० प्राणायाम में प्राण रक्षक पुरुष को योग वल के लिये नि० महावाक् के रक्षक पुरुष को

तेज के लिये नि० कर्षक पुरुष को पृथिवी के लिये नि० भूतात्मा रूप पुरुष को संसार के लिये नि० शरीर रूप गृह के पालक जीवात्मा रूप पुरुष को भद्र पुरुष के लिये नि० योग धनी पुरुष को श्रेय के लिये नि० मन को अनुभव के लिये नियुक्त करता है ॥ ११ ॥

भायै दार्वाहारम्प्रभाया अग्न्येधम्ब्रध्नस्य विष्टपायाभिषेक्तारं वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारं देवलोकाय पेशितारम्मनुष्यलोकाय प्रकरितार ᳪ सर्वेभ्यो लोकेभ्य उपसेक्तारमव ऽ ऋत्यै वधायोपमन्थितारम्मेधाय वासः पल्पूलीम्प्रकामाय रजयित्रीम् १२

ब्रह्म ज्योतिषे प्राणायाम कर्त्तारं नि० प्राण एवास्येध्मः श० ११।२।५।२ महा नारायण ज्योतिषे आत्माग्नेर्वर्धकं नि० सूर्य लोकाय शिवाभिषेक कर्त्तारं नि० इन्द्र लोकाय दान कर्त्तारं नि० देव लोकाय प्रतिमाद्यवयव कर्त्तारं नि० पिशअवयवे। मनुष्य लोकाय विक्षेप्तारं पुरुषं नि० कृषिक्षेपे। सर्वेभ्यो लोकेभ्य उपसेचन कर्त्तारं नि० लोको पमन्थन कर्त्तारं वधाय मृत्यु भार्यायै नि० योग धर्माय देह रूप वस्त्रस्य छेदन कर्त्री स्त्रियं नि० काम देवायेन्द्रियरङ्कारिणीं स्त्रियं नि० ॥ १२ ॥

भाषार्थः ब्रह्मज्योति के लिये प्राणायाम कर्त्ता पुरुष को नि० आत्माग्नि के वर्धक पुरुष को महा नारायण ज्योति के लिये नि० शिवाभिषेक कर्ता को सूर्य लोक के लिये नि० दान कर्त्ता पुरुष को इन्द्र लोक के लिये नि० प्रतिमा आदि अवयव कर्त्ता को देवलोक

के लिये नि० विक्षेप्ता पुरुष को नरलोक के लिये नि० उपसेचन कर्त्ता पुरुष को सब लोकों के लिये नि० लोकोपमन्थन कर्त्ता पुरुष को वधार्य मृत्युभार्या के लिये नि० देह रूप वस्त्र काटने वाली स्त्री को योग यज्ञ के लिये नि० इन्द्रियों को रंगने वाली स्त्री को काम व के लिये नि०॥ १२॥

ऋतये स्तेन हृदयं वैरहत्याय पिशुनं विविक्त्यै क्षत्तारमौपद्रष्ट्यायानुक्षत्तारं बलायानुचरम्भूम्ने परिस्कन्दं प्रियाय प्रियवादिनमरिष्ट्या ऽ अश्वसादं स्वर्गाय लोकाय भागदुघं वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारम्॥ १३॥

निन्दायै स्तेन हृदयं पुरुषं नि० वैर रूप हत्यायै परवृत्त सूचकं नि० विवेक रूपायै देव्यै पर दुःख निवारकं पुरुषं नि० साक्षी रूपात्माग्नये समीपे पर दुःख निवारकं पुरुषं नि० योग बलायानुचरं भक्तं नि० महापुरुषाय त्मानं गति मन्तं पुरुषं नि० इष्ट देवाय प्रियवादिनं भक्तं नि० अविनाशिन्यै पराशक्त्यै प्राणारोहं पुरुषं नि० स्वर्गलोकाय बहुदान कर्त्तारं नि० ब्रह्म लोकाय निष्काम यज्ञस्य कर्त्तारं नियुनक्ति॥ १३॥

भाषार्थः॥ निन्दा देवी के लिये चोर हृदय पुरुष को नि० वैर रूप हत्या के लिये पर वृत्त सूचक पुरुष को नियुक्त० विवेक रूप देवी के लिये पर दुःख निवारक पुरुष को नि० साक्षी रूप आत्माग्नि के लिये समीप में पर दुःख निवारक को नि० योग बल के लिये

अनुचरभक्त को नि० परमेश्वर के लिये आत्माराम पुरुष को नि० इष्टदेव के लिये मियवादी भक्त को नि० अविनाशिनी पराशक्ति के लिये प्राणारोह पुरुष को नि० स्वर्ग लोक के लिये बहुदानकर्त्ता पुरुष को नियुक्त करता है ब्रह्म लोक के लिये निष्कामयज्ञ कर्त्ता को नि०॥१३॥

मन्यवेऽयस्तापङ्क्रोधायनिसरं योगाययोक्तारꣳ शोकायाभिसर्त्तारङ्क्षेमायविमोक्तारमुत्कूलनिकूलेभ्यंस्त्रिष्ठिनं वपुषेमानस्कृतꣳ शीलायाञ्जनीकारीन्निर्ऋत्यै कोशकारीं यमायासूम्॥१४॥

आसुरकर्मणात्माग्निस्तापकं पुरुषं महङ्कारायनि० क्षमाहीनं पुरुषं क्रोधायनि० जीवेशयोर्योक्तारं पुरुषं योगायनि० लोभेन व्याकुलं पुरुषं शोकाय नि० देहादात्म विमोचनकर्त्तारं पुरुषं क्षेमाय नि० त्रिषु देहेषु स्थितं पुरुषमूर्ध्वाधः लोकेभ्यो नि० अभिमानिनं पुरुषं देहायनि० पतिभक्त्याञ्जनरञ्जित नेत्र कर्त्रीं स्त्रियं शीलाय नि० अन्नमय कोश कारिणीं पतिभक्ति हीनां स्त्रियमधर्मभार्यायै नि० पतिव्रत हीनां स्त्रियं यमायनि०॥१४॥

भाषार्थः॥ आसुर कर्म करके आत्माग्नि के तापक पुरुष को अहंकार के लिये नि० क्षमा रहित पुरुष को क्रोध के लिये नि० जीव ईश का योग करने वाले पुरुष को योग के लिये नि० लोभ से व्याकुल पुरुष को शोक के लिये नि० अपने आत्मा को देह से अनासक्त करने वाले पुरुष को क्षेम के लिये नि० तीनों शरीर में आसक्त

को नीचे ऊपर के लोकों के लिये नि० अभिमानी पुरुष को देह के लि
ये नि० पतिभक्ति रूप अञ्जन रञ्जित नेत्र वाली स्त्री को शील के लिये
नि० अन्नमय कोश की वृद्धि करने वाली पतिभक्ति से हीन स्त्री
को अधर्म भार्या के लिये नि० पति व्रत हीन स्त्री को यम के लिये
नि०॥ १४॥

यमाय यमसूमथर्वभ्योवं तोकाॐ सम्वत्सरायपर्या
यिणीम्परिवत्सरायाविजातामिदावत्सरायातीत्वं
रीमिद्वत्सरायातिष्कद्वरीं वत्सरायविजर्जरांसम्व
त्सरायपलिक्नीमृभुभ्योऽजिनसन्धॐ साध्येभ्यं
श्चर्मम्नम्॥ १५॥

द्वैतोत्पादकांस्त्रियं यमायनि० वासिना वीजरहितांस्त्रि
यं माणेभ्यो नि० माणो वाऽअथर्वा श० ६।४।२।१ पति
भक्त्यनुक्रमज्ञांस्त्रियमीश्वरायनि० सम्वत्सरो वै प्रजा
पतिः १०।२।४।१ निर्वासनांस्त्रियं विष्णवे नि० अतिग
तिशीलांस्त्रियं ब्रह्मणे नि० देहाभिमान रहितांस्त्रियं शि
वाय नि० शिथिलांस्त्रियमात्मने नि०। वृद्धांस्त्रियमन्त
र्यामिने नि० मृगचर्मधरं योगमार्गस्थं पुरुषं पितृभ्यो नि०
ऋतवो वै पितरः श० २।६।१।३२ (च) चतुर्मुखः (ब्र)
विष्णुः (र) रुद्रः (म) महामायाते षां ध्यानाभ्यासकरं
पुरुषं साध्येभ्यो देवेभ्यो नि०॥ १५॥

भाषार्थः— द्वैतोत्पादक स्त्री को यम के लिये नि० वासना वी
ज रहित स्त्री को माणों के लिये नि० पति भक्ति का अनुक्रम जाने

वाली स्त्री को ईश्वर के लिये नि० निर्वासना स्त्री को विष्णु के लिये नि० अतिगति शील स्त्री को ब्रह्मा के लिये नि० देहाभिमान रहित स्त्री को शिव के लिये नि० शिथिला स्त्री को आत्मा के लिये नि० वृद्धा स्त्री को अन्तर्यामी के लिये नि० योगमार्गस्थ पुरुष को पितरों के लिये नि० त्रिदेव और शक्ति के उपासक पुरुष को साध्यों के लिये नि०।१५

सरोभ्यो धैवरमुपस्थावराभ्यो दाशं वैशन्ताभ्यो वैन्दं नड्वलाभ्यः शौष्कलम्पारायं मार्गारमवारायं कैवर्तं तीर्थेभ्य आन्दं विषमेभ्यो मैनालꣳ स्वनेभ्यः पर्णकं गुहाभ्यः किरातꣳ सानुभ्यो जम्भकं पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१६॥

कैवर्तापत्यं सरोभ्यो नि० धीवरं स्थिरजलेभ्यो नि० निषादापत्यं समुद्रेप्रवेशकारक जलेभ्यो नि० मत्स्यजीविनं नड तृण युक्त जलेभ्यो नि० मृगारेरपत्यमुत्तरतीराय नि० कैवर्त्तमर्वाक् तीराय नि० आदि वन्धने अदति आन्दस्तं मनो वन्धन कर्त्तारं पुरुषं तीर्थेभ्यो नि० मीनग्राही मीनाल स्तदपत्यं पुरुषं विषमदेशेभ्यो नि० भिल्लं निन्दाशब्देभ्यो नि० किरातं गुहाभ्यो नि० हिंसकं सानुभ्यो नि० जभि नाशने। कुत्सितं नरं पर्वतेभ्यो नि०॥१६॥

वीभत्सायै पौल्कसम्वर्णाय हिरण्यकारन्तुलायै वाणिजम्पश्चादोषाय ग्लाविनं विश्वेभ्यो भूतेभ्यः सिध्मलम्भूत्यै जागरणमभूत्यै स्वपनमार्त्यै जनवा

दिनं व्यृद्ध्या ऽअपगल्भ थं सं थंशराय प्रच्छिदम् ९
पुल्कसापत्यं निन्दायै नि० स्वर्णकारं चातुर्वर्ण देवसमूहाय
नि० वणिगपत्यं तुलायै नि० हर्ष शून्यं पुरुषं पश्चात्ता
पाय नि० ग्लौहर्षक्षये पश्चाद्व्यथं पश्चात्ऽस्पर्थे। (स)
जीवः (इ) मनः (ध) बुद्धिः (म) माया तासां ऽलं भूषणं
भूतात्म पुरुषं सर्वेभ्यस्तत्वेभ्यो नि० जागरण रूपं पुरुषं
सम्पत्यै नि० स्वपन रूपं पुरुषमसंपत्यै नि० जनवादिनं
पुरुषमार्त्यै नि० उत्साहहीनं पुरुषं विरुद्ध सम्पत्यै नि०
संसार वृक्षस्य छेदन कर्त्तारं पुरुषं ज्ञान रूप वाणाय नि० १७

भाषार्थः—कैवर्तापत्य को सरोवरों के लिये नि० धीवर को
स्थिर जलों के लिये नि० निषादापत्य को समुद्र में मिलने वाली
नदियों के लिये नि० मत्स्यजीवी को नड तृण युक्त जलों के लिये
नि० मृगारि की सन्तान को उन्नर नीर के लिये नि० कैवर्त्त को अर्वा
क नीर के लिये नि० मनोजयी पुरुष को तीर्थों के लिये नि० मीन
ग्राही की सन्तान को विषम देशों के लिये नि० भिल्ल को निन्दा
शब्दों के लिये नि० किरात को गुहाओं के लिये नि० हिंसक को
शिखरों के लिये नि० कुत्सित् नर को पर्वतों के लिये नि०
. १६॥ पुल्कस पुत्र को निन्दा के लिये नि० स्वर्णकार को चातुर्व
र्ण देवताओं के लिये नि० वणिक् पुत्र को तुला के लिये नि०
हर्ष शून्य पुरुष को पश्चात्ताप के लिये नि० माया मन बुद्धि जीव
के भूषण भूतात्म पुरुष को सब तत्वों के लिये नि० जागर रूप पु
रुष को सम्पत्ति के लिये नि० स्वपन रूप पुरुष को असम्पत्ति के

लिये नि० जनवादी पुरुष को शान्ति के लिये नि० उत्साह हीन को विरुद्ध सम्पत्ति के लिये नि० संसार वृक्ष के छेदक को ज्ञान रूप बाण के लिये नि० ॥ १७ ॥

अक्षराजाय कितवङ्कृताया दिनव दर्शान्त्रेतायै कल्पिनन्द्वापराया धिकल्पिनं मास्कन्दाय सभास्थाणुम्मृत्यवे गोव्यच्छमन्तकाय गोघातङ्क्षुधे यो गां विकृन्तन्तम्भिक्षमाण उपतिष्ठति दुष्कृताय चरकाचार्यम्पाप्मने सैलगम् ॥ १८ ॥

द्यूतकारं पुरुषं कलये नि० आदिनः भक्षकस्य कर्मफलस्यावदर्शमवज्ञा पूर्वक द्रष्टारं पुरुषं कृत युगाय नि० शुक्तौ रजतमिवतथा ब्रह्मणि मायोपाधेरारोप कर्त्तारं पुरुषं त्रेतायै नि० अधिकमारोप कर्त्तारं पुरुषं द्वापराय नि० सभायां जडीभूतं पुरुषं तिरस्काराय नि० वेदवाचाविमुखं पुरुषं मृत्यवे नि० वेदवाचां विरुद्धार्थ करणाद्धन्तारं पुरुषमन्तकाय नि० यो वेदवाचं विरुद्धार्थे करणाच्छिन्दन्तं धूर्त्तं प्रति विद्याभिक्षामिच्छन्नुपतिष्ठति तं पुरुषं क्षुधे दद्यैनि० चरकाणां गुरुं पापकर्मणे नि० कृषिकर्मकर्त्तारं तस्य प्रायश्चित्त हीनं पुरुषं पाप्मने नियुनक्ति सीरगः कर्षकस्तस्य कृषिकर्म सैरगं रस्यलत्वम् ॥ १८ ॥

भाषार्थः — द्यूत कर्त्ता पुरुष को कलियुग के लिये नि० जो पुरुष कर्म फल को अवज्ञा पूर्वक देखता है उसे कृत युग के लिये नि० जैसे सीप में चांदी उसी प्रकार ब्रह्म में मायोपाधि का आरोपण करने

वाले पुरुष को त्रेता युग के लिये नि॰ अधिक आरोपण कर्ता पुरुष को द्वापर के लिये नि॰ सभा में जड़ीभूत पुरुष को तिरस्कार के लिये नि॰ वेद वाणी से विमुख पुरुष को मृत्यु के लिये नि॰ विरुद्ध अर्थ करने से वेदों के हन्ता पुरुष को अन्तक के लिये नि॰ जो मनुष्य विरुद्ध अर्थ करने से वेद वाणी का छेदक है उस धूर्त के निकट जो विद्या भिक्षा को चाहता रहता है उस पुरुष को क्षुधा देवी के लिये नि॰ चरकों के गुरु को पाप कर्म के लिये नि॰ जो खेती करता है उस का प्रायश्चित्त नहीं करता उसको पाप पुरुष के लिये नियुक्त करता है ॥ १८॥

प्रतिश्रुत्कायाऽअर्त्तनङ्घोषायभषमन्तायबहुवादिनमनन्तायमूक थं शब्दायाडम्बराघातम्महसेवीणावादङ्क्रोशायतूणवध्ममवरस्पराय शङ्खध्मं वनायवनपमन्यतोऽरण्यायदावपम् ॥ १९॥

निन्दामयं पुरुषं प्रतिध्वनिरूपदेव्यै नि॰ कुक्कुरवद्वृथा जल्पितं पुरुषं घोषाय नि॰ बहुवादिनं पुरुषं संसाराय नि॰ मौनव्रतं पुरुषं ब्रह्मणे नि॰ आडम्बरवादिनं पुरुषं शब्दाय नि॰ वीणावादकं यत्ताय नि॰ तूणवध्ममाह्वानाय नि॰ शङ्खध्मं विष्णवे नि॰ वनपालकं पुरुषं वनाय नि॰ वनवह्निपं पुरुषं वनभागाय नियुनक्ति ॥ १९ ॥

भाषार्थः – निन्दामय पुरुष को प्रति ध्वनि रूप देवी के लिये नि॰ कुक्कुर सम वृथा जल्पी पुरुष को घोष के लिये नि॰ बहुवादी पुरुष को संसार के लिये नि॰ मौनव्रत धारी पुरुष को ब्रह्म के लि-

ये नि॰ आडम्बर बजाने वाले को शब्द के लिये नि॰ वीणा बजानेवाले को यज्ञ के लिये नि॰ तूण बजाने वाले को आह्वान के लिये नि॰ शंख बजाने वाले को विष्णु के लिये नि॰ वन पालक को वन के लिये नि॰ दावानल पालकोवनभाग के लिये नि॰ ॥१९॥

नर्मायं पुंश्चलू हंसाय कारिं यादंसे शाबल्यां ग्रामण्यं गणकमभिक्रोशकन्तान्महसे वीणावादम्पाणिघ्नन्तूणवध्मन्तान्नृत्तायानन्दाय तलवम्॥२०॥

व्यभिचारिणीं स्त्रियं परिहासाय नि॰ प्रश्नोत्तरकर्त्तारं संशयात्मकं पुरुषं हासाय नि॰ सात्विकीं स्त्रियं ब्रह्माण्ड रूप समुद्रे प्रादुर्भूताय विराट्पुरुषाय नि॰ नर समूहस्य नेतारं ज्योतिर्विदमभक्तानां निन्दकं तान्त्रीन्पुरुषानिष्टदेवोत्सवाय नि॰ वीणावादं पाणिघ्नं तूणवध्मं तान्त्रीन्पुरुषान् नृत्ताय नि॰ वाद्यवादकं पुरुषं देवानन्दाय नि॰ ॥२०॥

भाषार्थः – व्यभिचारिणी स्त्री को परिहास के लिये नि॰ प्रश्नोत्तरकर्त्ता संशयात्मक पुरुष को हास के लिये नि॰ सात्विकी स्त्री को विराट् पुरुष के लिये नि॰ नर समूह का नेता ज्योतिषी अभक्तों का निन्दक इन तीन पुरुषों को इष्ट देव के उत्सवार्थ नि॰ वीणा ताली तूण बजानेवाले पुरुषोंको नृत्य के लिये नि॰ बाजा बजाने वाले पुरुष को देवता के आनन्दार्थ नि॰ ॥२०॥

अग्नये पीवानम्पृथिव्यै पीठसर्पिणं वायवे चाण्डालमन्तरिक्षाय वंशनर्त्तिनन्दिवे खलतिं सूर्याय हर्य्यक्षन्नक्षत्रेभ्यः किर्मिरञ्चन्द्रमसे कि

ला समहे शुक्लम्पिङ्गाक्षं राज्यै कृष्णम्पिङ्गाक्षम् २०
अग्नेः पुष्टं पुरुषमग्नये नि० आसन रूप वाहनैर्गच्छन्तं पुरु
षं पृथिव्यै नि० चण्डं तीव्र गति मन्तं पुरुषं वायवे नि० वंश
नर्त्तन शीलं पुरुष मन्तरिक्षाय नि० अलोमा पीरस्कं मुण्डं
पुरुषं दिवे नि० हरो सूर्ये व्याप्तं सूर्य भावापन्नं पुरुषं सूर्याय
नि० चित्र वर्णं पुरुषं नक्षत्रेभ्यो नि० (क) कामः (इ) कामि
नी (ल) पृथिवी (आस) आसनं यस्य तं पुरुषं चन्द्रमसे नि०
दीप शिवा तुल्ये लिंग शरीरे व्याप्तं सात्विकं पुरुषं देव याना
य नि० तामसं पुरुषं पितृय।नाय नि०॥२१॥

अथैतानष्टौ विरूपानालभतेऽतिदीर्घञ्चातिह्र
स्वञ्चातिस्थूलञ्चातिकृशञ्चाति शुक्लञ्चाति
कृष्णञ्चाति कुल्वञ्चाति लोमशञ्च अशूद्रा अब्रा
ह्मणास्ते प्राजापत्याः। मागधः पुंश्चली कितवः
क्लीबो ऽशूद्रा अब्राह्मणास्ते प्राजापत्याः॥२२॥

व्यष्टिपुरुषाः समष्टि पुरुषेषु नियुक्ताः। अद्ययेऽष्टौ सम
ष्टि पुरुषाः परिशिष्टास्तान्परस्पर विरुद्ध रूपान्महापु
रुषे नियुनक्ति अति दीर्घं प्रधानाख्यं पुरुषं १ अति ह्रस्वं
विराजोत्पत्ति कारणं कर्म समूह वीजं २ अति स्थूलं विरा
ट देहं ३ अति कृशं सूक्ष्मं हिरण्य गर्भ देहोपाधिं ४ अति
शुक्लं विष्णोपाधिं ५ अति कृष्णं रुद्रोपाधिं ६ अति कुल्वं
यती रूपावताराणां देहोपाधिं ७ अति लोमशं गृहस्थ
रूपावताराणां देहोपाधिं ८ महापुरुषे नि० तेऽष्टौ पुरुषा

ऽदासाईशरूपत्वात्। अब्राह्मणाः प्रधानरूपत्वात्ब्रह्म देवताः। तथा (मा) माया (ग) गौरवं मायागौरवधारकं समष्टिमनः १ पुरुषस्य शक्तिर्भूत्वाऽपिप्रधान कार्ये ब्रह्माण्डव्याप्ता समष्टिबुद्धिः २ मायापाशैर्धूतकारं समष्टिचित्तम् ३ ब्रह्मप्राप्तोपुरुषार्थहीनो देहाभिमानरूपोऽहङ्कारः ४ एतेऽप्यदासाईशाङ्गरूपत्वात्। अब्राह्मणाः प्रधानरूपत्वात्। तेप्राजापत्या ब्रह्म देवताः॥ २२॥

यदा सर्वे व्यष्टिपुरुषाः समष्टिपुरुषाश्च कारणेनियुक्तास्तदैकोमहापुरुष एव परिशिष्टस्तं पुरुषसूक्तेनस्तौति। आध्यात्मिकार्थेन यजमानोऽपिमहापुरुषयोगं प्राप्नोति देवोभूत्वा देवंस्तौति स आध्यात्मिकार्थो ब्रह्मभाष्ये वर्त्तते विस्तरभयान्नात्रलिखितस्तत्रैवद्रष्टव्यो मननीयश्चेति॥

भाषार्थः – अन्नों से पुष्ट पुरुष को अग्नि के लिये नि० आसन रूप वाहनों से चलते पुरुष को पृथिवी के लिये नि० तीव्र गतिमान पुरुष को वायु के लिये नि० दंष्ट्रा से नर्तन शील पुरुष को अन्तरिक्ष के लिये नियुक्त० मुण्ड पुरुष को स्वर्ग के लिये नि० सूर्योपासक सूर्यो भावापन्न पुरुष को सूर्य के लिये नि० चित्र वर्ण पुरुष को नक्षत्रों के लिये नि० काम कामिनी पृथ्वी में आसक्त पुरुष को चन्द्रमा के लिये नि० सात्विक पुरुष को देवयान के लिये नि० तामस पुरुष को पितृयान के लिये नि० २१

व्यष्टि पुरुष समष्टि पुरुषों में नियुक्त किये अब जो आठ समष्टि

पुरुष शेष रहे उन परस्पर विरुद्ध रूपों को महापुरुष में [illegible] करता है अति दीर्घ प्रधान नाम पुरुष १ अति ह्रस्व विराजोत्पत्ति कारण कर्म समूह वीज २ अति स्थूल विराट् शरीर ३ अति कृश सूक्ष्म हिरण्यगर्भ देहोपाधि ४ अति शुक्ल विष्णो पाधि ५ अति कृष्ण रुद्रोपाधि ६ यती रूप अवतारों की देहोपाधि ७ गृहस्थ रूप अवतारों की देहो पाधि ८ को महापुरुष में नि० वे आठों पुरुष ईश रूप होने से अदास और प्रधान रूप होने से अब्राह्मण हैं उनका देवता महापुरुष वा ब्रह्म है तथा माया गोरवका धारन करनेवाला समष्टि मन १ पुरुष की शक्ति होकर भी प्रधान कार्य ब्रह्मांड में व्याप्त समष्टि बुद्धि २ माया पाशों से द्यूत करने वाला समष्टि चित्त ३ ब्रह्म प्राप्ति में पुरुषार्थ हीन देहाभिमान रूप अहंकार ४ ये भी ईशांग रूप होने से अदास और प्रधान रूप होने से अब्राह्मण हैं इनका देवता महापुरुष वा ब्रह्म है ॥२२॥

जब सब व्यष्टि पुरुष और समष्टि पुरुष कारण में नियुक्त हुए तब अकेला महापुरुष ही शेष रहा उसको पुरुष सूक्त से स्तुत करता है आध्यात्म अर्थ द्वारा यजमान भी महा पुरुष में योग को पाता है देवता होकर देवता को स्तुत करता है वह आध्यात्म अर्थ ब्रह्म भाष्य में वर्त्तमान है विस्तार भय से यहां नहीं लिखा वहां देखने और मनन करने योग्य है॥

इति श्री भृगुवंशावतंस श्री नाथूराम सूनु ज्वालाप्रसाद शर्म्म संगृहीत मूर्त्ति रहस्यस्य तृतीय भागे महापुरुष मूर्त्ति प्रतिष्ठा नाम प्रथमोऽध्यायः॥१॥

अथद्वितीयोऽध्यायः

सहस्त्र शीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्र पात् । सभूमिं सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ १॥

भाषार्थः – सब लोकों में व्याप्त जो मह्रा नारायण सर्वात्मा होने से अनन्त शिर वाला अनन्त नेत्र वाला अनन्त पाद वाला है वह व्यष्टि समष्टि रूप स्थान को तिरछा ऊंचा नीचे व्याप्त करके नाभि से दशाङ्गुल परिमित देश हृदय को अति क्रमण कर अन्तर्यामी रूप से स्थित हुआ ॥ १॥

पुरुषएवेद थं सर्व्वंयद्भूतंयच्च भाव्यम् ॥
उतामृतत्वस्येशानोयदन्नेनातिरोहति २

भाषार्थः – यह जो अतीत ब्रह्म संकल्पज जगत है और जो भविष्य ब्रह्म संकल्पज जगत है और जो जगत बीज वा अन्न परिणामवीर्य से वृक्ष नर पशु आदि रूप प्रकट होता है वह सब मोक्ष का स्वामी महा नारायण ही है उसका अन्य न होने से ॥ २॥

एतावानस्यमहिमातोज्यायांश्चपूरुषः । पादोस्यविश्वाभूतानित्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥ ३॥

भाषार्थः – इस महानारायण की विभूति इतनी है यह नहीं चिदात्मा महा नारायण इस संसार से अतिशय अधिक है जिस कारण सब ब्रह्माण्ड इस महा नारायण का चतुर्थांश है गो लोक में इस त्रिपाद का स्वरूप विनाश रहित है जिस कारण अनन्त ब्रह्म ही अपने भाग में अपनी ज्योति द्वारा महा नारायण रूप हुआ ॥ ३॥

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि। ४।

भाषार्थः - महानारायण ब्रह्माण्ड से ऊर्ध्व उत्कर्षो पूर्वक स्थित हुआ फिर इस महानारायण का चतुर्थांश इस संसार में व्याप्त हुआ माया में प्रवेश के अनन्तर १९ देवता तिर्यक् आदि रूप से नाना रूप वाला होता चराचर जगत को देखकर व्याप्त करता भया ॥ ४॥

ततो विराडजायत विराजो अधिपूरुषः। स जातो
अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः॥ ५॥

भाषार्थः - उस महानारायण से ब्रह्माण्ड देह तथा उस देह का अभिमानी पुरुष उसी देह को अधिकरण करके प्रकट हुआ वह उत्पन्न विराट् पुरुष श्रेष्ठ हुआ पश्चात् भूमि को उत्पन्न किया तदनन्तर ही देव मनुष्य आदि के शरीरों को उत्पन्न किया ॥ ५॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम्। पशूं
स्तांश्चक्रे वायव्यानारण्याग्राम्याश्चये। ६।

भाषार्थः - उस महानारायण से यज्ञ दधि मिश्र आज्य वा प्राण सम्पादित हुआ तथा उस महानारायण ने उन वायु या प्राण रूप देवता वाले पशुओं को उत्पन्न किया जो हरिण आदि वनवासी वा आरण्य काण्ड सम्बन्धी इन्द्रियां और अश्व आदि ग्रामवासी वा प्रवृत्त मार्ग सम्बन्धी इन्द्रियां हैं ॥ ६॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत॥ ७॥

भाषार्थः - उस सर्व लय स्थान यज्ञ पुरुष महानारायण से ऋग्वे

ई सौरासा उत्पन्न हुए उस महानारायण से छन्द उत्पन्न हुए उस महा नारायण से यजुर्वेद प्रकट हुए॥७॥

तस्मादश्वाऽअजायन्त येके चोभयादतः। गावोह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः॥८॥

भाषार्थः-उस महानारायण से अश्व और जो कोई दूसरे पशु नीचे ऊपर के दांत वाले हैं उत्पन्न हुए और उस महानारायण से गौ बैल उत्पन्न हुए उस महानारायण से भेड़ बकरी उत्पन्न हुईं॥८॥

तं यज्ञम्बर्हिषिप्रौक्षन्पुरुषञ्जातमग्रतः। तेन देवा ऽअयजन्त साध्या ऋषयश्च ये॥९॥

भाषार्थः-जो साध्य देवता और सनकादि ऋषि हैं उन्होंने सृष्टि के पूर्व उत्पन्न उस यज्ञ साधन भूत विराट् पुरुष को आत्मलोक में प्रोक्षण किया उस विराट् रूप पशु द्वारा मानस याग को निष्पादन किया॥९॥

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्। मुखं किमस्यासीत्किम्बाहू किमूरू पादा उच्येते।१०।

भाषार्थः-प्रश्न जब विराट् पुरुष को महानारायण से प्रेरित महत अहंकार आदि ने उत्पन्न किया तब कितने प्रकारों से कल्पित किया इस विराट् पुरुष का मुख कौन हुआ कौन भुजा ऊरु हुए कौन पाद कहे जाते हैं॥१०॥

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽअजायत॥११॥

भाषार्थः-पूर्वोक्त प्रश्नों के उत्तर को कहते हैं ब्राह्मण इस विरा

ट् पुरुष का मुख हुआ क्षत्री बाहु रूप से निष्पादित
जो ऊरू हैं तद्रूप वैश्य हुआ चरणों से शूद्र उत्पन्न हुआ ॥११॥

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ।१२।

भाषार्थः - विराट् पुरुष के मन से चन्द्रमा उत्पन्न हुआ नेत्र से सूर्य उत्पन्न हुआ कर्ण से वायु और प्राण और मुख से अग्नि उत्पन्न हुआ

नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत
पद्भ्याम्भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां २॥ऽ अकल्पयन् ।१३।

भाषार्थः- नाभि के सकाश से अन्तरिक्ष हुआ शिर से स्वर्ग उत्पन्न हुआ चरणों से भूमि उत्पन्न हुई श्रोत्र से दिशा उत्पन्न हुई उसी उक्त विधि से भूआदि लोकों को विराट् पुरुष के देह से कल्पना किया ॥१३॥

यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ।१४।

भाषार्थः -जब विद्वानों ने विराट् देह रूप हवि द्वारा ज्ञानयज्ञ को रचा तब वसन्त इस ज्ञान यज्ञ का घृत हुआ ग्रीष्म समिध तथा शरदऋतु हवि हुई ॥१४॥

सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः
देवा यद्यज्ञन्तन्वाना अबध्नन्पुरुषम्पशुम् ।१५।

भाषार्थः -जब ज्ञान यज्ञ को करते विद्वानों ने विराट् पुरुष रूप पशु को भावित किया तब गायत्री आदि सात छन्द वा क्षीर आदि

द सौ... तज्ञानं यज्ञ की परिधि हुए बारह मास पांच ऋतु तीनों लोक सूर्य अथवा गायत्री आदि सात अति जगती आदि सात कृति आदि सात छन्द इसकी सामिधा किये॥१५॥

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्। तेह नाकम्महिमानस्सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥१६॥

भाषार्थः – विद्वानों ने विराट् रूप हवि सम्बन्धी ज्ञान यज्ञ से यज्ञ पुरुष महा नारायण को पूजन किया वे महा नारायण पूजन सम्बन्धी धर्म्म मुख्य हुए जिस महा नारायण लोक में पूर्व साध्य देवता रहते हैं उस दुःखरहित लोक को ही उन महा नारायण के भक्त महात्माओं ने प्राप्त किया॥१६॥ पुरुष सूक्तानुवाक समाप्त हुआ॥

अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्म्मणः समवर्त्तताग्रे। तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे॥१७॥

भाषार्थः – महा नारायण की उपासना यजमान की सायुज्य को वर्णन करते हैं पृथ्वी रूप देह के इन्द्रिय समूह से और कमलान्तरिक्षों से संहृत अंगुष्ठ मात्र जीव महा नारायण के समीप प्राप्त हुआ महा नारायण उस जीवात्मा के रूप को विधान करता फिर उसको अपने आत्मा में लय करता है श्रेष्ठ काल कृतयुग में अनन्य भक्त का वह मुख्य देवभाव था॥१७॥

वेदाहमेतम्पुरुषम्महान्तमादित्यवर्णन्त

मसः परस्तात् । तम[illegible] पंथा विद्यतेयनाय।१८।

भाषार्थः - मंत्र कहता है मैं इस सूर्य समान वर्ण वाले अविद्याशून्य ज्ञान स्वरूप महा नारायण को जानता हूं उस महा नारायण को जानकर मृत्यु को अति क्रमण कर प्राप्त करता है आश्रय के लिये दूसरा मार्ग विद्यमान नहीं है॥१८॥

प्रजापतिश्चरति गर्भेअन्तरजायमानो बहुधा विजायते। तस्य योनिम्परि पश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा।१९

भाषार्थः - ब्रह्मा गर्भ के मध्य प्राप्त होता है जन्म लेता हुआ देवता तिर्यक् मनुष्य आदि रूप से उत्पन्न होता है ब्रह्मज्ञानी उस ब्रह्मा के उत्पत्ति स्थान महानारायण को सब ओर से देखते हैं जिस में ही सब ब्रह्माण्ड स्थित हैं॥१९॥

यो देवेभ्य आतपति यो देवानाम्पुरोहितः।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये। २०

भाषार्थः - जो महानारायण सूर्य चन्द्रमा आदि के लिये अपने प्रकाश को देता है जो ब्रह्मा विष्णु महेशादि देवताओं का आगे हितकर वा पूज्य है जो ब्रह्मादि देवताओं से पूर्व प्रादुर्भूत हुआ उस ब्रह्म ज्योति के लिये नमस्कार॥२०॥

रुचम्ब्राह्मञ्जनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन् । यस्त्वैवम्ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन्वशे॥२१॥

भाषार्थः - कृतयुग में उस ब्रह्मज्योति स्वरूप महानारायण को

दे सौंदासा उत्स[illegible] हुए [illegible] सानी तुमको पूर्वोक्त प्रशंसा [illegible] पुन सव देवता उस ब्रह्म निष्ठ के वश में होते हैं अर्थात् महानारायण का उपासक जगत्पूज्य होता है ॥ २१॥

श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यां वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौव्यात्तम् । इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्वलोकं मइषाण । २२।

भाषार्थः – हे महा नारायण श्री और लक्ष्मी तेरी पत्नी रूप हैं और ब्रह्मा के अहोरात्र तेरे पार्श्व रूप हैं संसार रोगसे रक्षा न करने वाले दैव मानुषआदि शरीर रूप हैं नरनारायण तेरा विकासित मुख हैं स्वयं चाहते तुम अपने आत्मा को प्राप्त कराओ इस अपने लोक को मुझे प्राप्त कराओ सव योगैश्वर्य को मुझे प्राप्त कराओ ॥ २२॥

इति श्री भृगुवंशावतंस श्री नाथूराम सूनु ज्वालाप्रसाद शर्म्म संगृहीते मूर्त्तिरहस्यस्य तृतीयभागे माहापुरुषस्तुतिर्नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २॥

अथ फलरूपतृतीयोऽध्यायः

एवमेता देवता यथारूपं पशुभिः समर्धयति ता एनं समृद्धाः समर्धयन्ति सर्वैः कामैः । १०

भाषार्थः – इस प्रकार इन देवताओं को यथा योग्य पुरुष रूप पशुओं से समृद्ध करता है वे समृद्ध देवता इस यजमान को सव वांछितों से वृद्धि देते हैं । १० ।

आज्येन जुहोति । तेजो वा ऽआज्यं तेजसैवास्मिंस्तत्तेजो दधात्याज्येन जुहोत्येतद्वै देवानां प्रियं धाम यदाज्यं प्रियेणैवैनान्धाम्ना समर्धयति त ऽएनं

समृद्धाः समर्थ ... न्तसर्वैः कामैः।११।

भाषार्थः - इस महा पुरुष की प्रतिष्ठा में घृत से होम करता है क्यों कि घृत निश्चय तेज है तेज द्वाराही इस महा पुरुषमें उस तेज को धारण करता है जो कि ब्रह्माण्ड में व्याप्त है घृतका होम इसलिये है कि यह घृत देवताओं का प्रिय तेज है प्रिय तेजसेही इन देवताओं को समृद्ध करता है वे समृद्ध देवता इस यजमान को सबकामनाओं से वृद्धि देते हैं॥११॥

नियुक्तान्पुरुषान ब्रह्मा दक्षिणतः पुरुषेणनारायणेनाभिष्टौति सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपादित्येतेन षोडशर्चेन षोडश कलंवाऽइदꣳ सर्वꣳ सर्व पुरुषमेधः सर्वस्याप्त्ये सर्वस्यावरुद्ध्याऽइत्थमसीत्थमसीत्युपस्तौत्येवैनमेतन्महयत्येवाथो यथैष तथैनमेतदाह तत्पर्यग्निकृताः पशवो बभूवुरसंज्ञप्ताः॥१२॥

भाषार्थः - ब्रह्मा दक्षिणओर से षोडश ऋचा द्वारा उन नियुक्त पुरुषों को महा पुरुष रूप से स्तुत करता है क्योंकि यह सब षोडश कला है सब पुरुष मेध है सबकी प्राप्ति और सबके अवरोधार्थ स्तुति करता है तुम ऐसे हो तुम ऐसे हो और पर्यग्निकृत पुरुष संज्ञप्त नहीं होते॥१२॥

अथ हैनं वागभ्युवाच। पुरुषमासंतिष्ठिपो यदि संस्थापयिष्यसि पुरुषएव पुरुषमत्स्यतीति तान्पर्यग्निकृतानेवोदसृजन्त द्वेवत्या आहुतीरजु

दसांद्रासा उत्स ... स्तौ देवता श्रीणस्तृप्ता एनं प्रीता प्रीणन्त्सर्वैः कामैः।१३।

भाषार्थः – आकाशवाणी ने इस यजमान नारायण से कहा हे पुरुष इन पुरुष रूप पशुओं को संस्थापित मत करजो संस्थापित्त करोगे पुरुष ही पुरुष को भक्षण करेगा इति इस आकाश वाणी को सुन कर श्री नारायण ने उन पर्यग्नि कृत पशुओं को छोड दिया और घृत से देवता सम्बन्धी आहुतियों को होमा उन आहुतियों से वे देवता प्रसन्न हुए उन प्रसन्न देवताओं ने इस को सब कामनाओं से तृप्त किया॥१३॥

आज्येनजुहोति तेजोवा ऽ आज्यं तेजसैवास्मिंस्तत्तेजोदधाति।१४।

भाषार्थः – घृतसे होम करता है निश्चय घृत तेज है तेजद्वाराही उस पौरुष तेज को इस महा पुरुष में धारण करता है॥१४

एकादशिनैः स ᳪ स्थापयति। एकादशाक्षरा त्रिष्टुब्वज्रस्त्रिष्टुब्वीर्यं त्रिष्टुब्वज्रेणैवै तद्वीर्येण यजमानो मध्यतः पाप्मानमपहते।१५।

भाषार्थः – एकादशसंख्या वाली आहुतियों को अग्नि में डालता है ११ अक्षरका त्रिष्टुप्छन्द है त्रिष्टुप् वज्र है त्रिष्टुप बल्ल है उस वज्र बल के द्वारा ही यजमान पाप को मध्य से दूर करता है१

उदयनीयाया ᳪ स ᳪ स्थितायाम्। एकादशाव शाअनूबन्ध्या आलभते मैत्रा वरुणी वैश्व देवी बौर्हस्पत्या एतासां देवतानामाप्त्यै तद्यद्बार्हस्प

न्यो भवन्ति प्राण व ...

एयेवान्ततः प्रतितिष्ठति ॥ १६ ॥ वैश्वकर्मणा न्युद्दयन ० ८ । ५ । १ । ४३ अयं वै वायुर्विश्वकर्मा यो ऽयं पवते मनो ह वायुर्भूत्वा दक्षिणतस्तस्थौ तस्य मनो वैश्वकर्मणं श० ८ । १ । २ । ८ प्राणोदानौ वै मित्रावरुणौ १ । ८ । ३ । १२ प्राणा वै विश्वे देवाः १४ । २ । २ । ३७ प्राणो हि बृहस्पतिः । १४ । ४ । १ । २२

भाषार्थः – मन की सन्तान इन्द्रियों के संस्थित होने पर मन सहित ११ इन्द्रियों को जो कि विषय वासना रहित होने से वन्ध्या रूप हैं और मित्रा वरुण विश्वे देवा बृहस्पति नाम प्राण का हवि हैं उनको प्राण नाम देवताओं की प्राप्ति के लिये आत्माग्नि में होमता है जिस कारण ये अन्त्या नाम इन्द्रियां प्राण का हवि हैं और प्राण ब्रह्म है उस कारण यजमान ब्रह्म में ही प्रतिष्ठित होता है ॥ १६ ॥

अथ यदेकादश भवन्ति । एकादशाक्षरा त्रिष्टुब्वज्रस्त्रिष्टुब्वीर्यं त्रिष्टुब्वज्रेणैवैतद्वीर्येण यजमानो मध्यतः पाप्मानमपहते त्रैधातव्युदवसानीयासावेव बन्धुः ॥ १७ ॥

भाषार्थः – जो ये ११ होती हैं ११ अक्षर का त्रिष्टुप् छन्द है त्रिष्टुप् वज्र है त्रिष्टुप् बल है इस वज्र बल से ही यजमान पाप को मध्य से नष्ट करता है ॥ १७ ॥

दं सां॑द्रासा उत्त [illegible] रस्तीऽ वताऽ [illegible] प्रातं प्रीताश्च प्रीणा
न्यद्रूमेश्च ब्राह्मणस्य च विचात्स पुरुष प्राची
दिग्धोतुर्दक्षिणा ब्रह्मणः प्रतीच्यध्वर्योरुदी
च्युद्गातुस्त देव होतृका अन्वाभक्ताः॥१८॥

भाषार्थः-इसके पीछे दक्षिणाओंका विचार है जो भाग देश वा अन्य भूमि का मध्य है वह आचार्य्य का भाग है वही ब्राह्मण पुरुष को जानै पूर्व दिशा होताकी है दक्षिण दिशा ब्रह्मा की है पश्चिम दिशा अध्वर्यकी उत्तर दिशा उद्गाता की है॥१८॥

अथ यदि ब्राह्मणो यजेत सर्व वेदसं दद्यात्सर्वं वै ब्राह्मणः सर्वꣳ सर्व वेदसꣳ सर्वं पुरुष मेधः सर्वस्याप्त्यै सर्वस्यावरुद्ध्यै॥१९॥

भाषार्थः-जो ब्राह्मण पुरुष मेधयज्ञ करै वह सर्ववेदस नाम दक्षिणा देवै क्योंकि ब्राह्मण सब है और सर्व वेदसभी सब है पुरुष मेधसव है सबके अवरोधार्थ दक्षिणा दी जाती है॥१९॥

महापुरुषस्यार्चनान्तेकर्त्तव्यमाह

अथात्मन्नग्नी समारोह्य। उत्तर नारायणेनादित्य मुपस्थायानपेक्षमाणोऽरण्य मभिप्रेयात्त देव मनुष्येभ्यस्तिरोभवति यद्युग्रामे विवत्से दरण्यो रग्नीसमारोह्योत्तर नारायणेनैवादित्य मुपस्थाय गृहेषु प्रत्यवस्येदथ तान्यज्ञक्रतूनाहरेत या नप्याप्नुयात्स वाऽएष न सर्वस्माऽअनुवक्तव्यः सर्वꣳ हि पुरुष मेधो नेत्सर्वस्याऽइव सर्वं ब्रवा

न्द्विसंतर...

थ्यो ऽस्य प्रियः स्यान्नेत्त्वेव सर्वस्मा ऽइव ॥ २०

भाषार्थः - महा पुरुष के पूजनानन्तर कर्त्तव्य को कहते हैं तदनन्तर आध्यात्मिकाधिदेव नाम अग्नियों को आत्मा में समवे करके और महा नारायण रूप से सूर्य्य का उपस्थान करके निरपेक्ष होकर वन को चला जावै वही संसारी मनुष्यों से अन्तर्धान होता है यदि ग्राम में वसना चाहे दोनों मकार की अरणी में अग्नि को स्थापन कर महा पुरुष रूप से सूर्य का उपस्थान कर गृहों में वास करे फिर उन यज्ञ कर्मों को करे जो इसको प्राप्त हुए यह महा पुरुष पूजन विधि सबको उपदेश करने योग्य नहीं है क्योंकि पुरुषमेध सर्व अर्थात् पूर्ण यज्ञ और प्रथमा विभक्ति एक वचन है सर्वस्मै अर्थात् बहु वचन चतुर्थी सम्बन्धी भेद वादियों को उपदेश करने योग्य नही यही प्रतिज्ञा रखनी चाहिये जो ज्ञात अर्थात् परीक्षित हो उसको उपदेश करे जो वेदार्थ ज्ञाता अथवा इसका प्रिय हो उसको उपदेश करे न कि भेद वादी नाम सबको ही उपदेश कर दे ॥ २० ॥

इति श्री भृगुवंशावतंस श्री नाथूराम सूनु ज्वाला प्रसाद शर्म्मसंगृहीते मूर्त्तिरहस्यस्य तृतीयभागे महा पुरुष मूर्त्ति प्रतिष्ठा नाम तृतीयो ऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थो ऽध्यायः

प्रश्न १ - मंत्रब्राह्मणयोरर्थज्ञानेनायं पुरुषमेधः

दर्सांद्रासाउत्प [illegible] स्तीदेवताश्रीब्रह्म [illegible] तस्मिन्नु पृष्टिकाश्चप्राणि
[illegible] उत्सृज्यन्ते तर्हि कस्मात्सांसारिका जनाहि
सापरायणा दृश्यन्ते॥
उत्तरं - द्विविधैवसृष्टिः। दैवी १ आसुरीच २ विद्या
द सोहि देवाः श० ३।७।३।१० असुराः प्राणपोषका
मोक्षोपाय रहिताः। वेदेषुद्वावर्थौ। अपरोक्षः परो
क्षश्च। देवाः परोऽक्षमर्थं मन्यन्ते परोऽक्षकामाहि
देवाः श० असुरास्त्वपरोक्षे मुह्यन्ते। परोक्षार्थोहिमु
ख्यः परमेश्वरसम्मतत्त्वात्। ब्राह्मणे सर्वत्र परोक्षा
र्थसूचकाः श्रुतयः सन्ति॥
प्रश्न २ - ये पुरुषाः परोक्षज्ञानेन शून्या हिंसात्मकंय
ज्ञं श्रद्धया कुर्वन्ति ते किं फलं माप्नुवन्तीति॥
उ० पुरुषमेधे तु सर्वं परोक्षमनुभवति तस्मादन्यथाक
र्त्ता पापमेव करोति किञ्चिदपि फलं नाप्नोत्युभयभ्रष्टोभ
वति सर्वेप्राणिनः पशवः परमेश्वरस्तु पशुपतिः परमेश्वरा
त्प्रादुर्भूत्वा तस्मिन्नेवस्थित्वान्ते तत्रैव लीयंते तदा महा
पुरुष एकेव परिशिष्यते तथैव यजमानः पुरुषमेधे महा
पुरुषं ज्ञानचक्षुषा दृष्ट्वा परमहंसो भवति यज्ञेषु पुरुष
मेधो हि तस्य दर्शनोपायोऽस्तीति॥
प्र० ३ - अस्य पुरुषमेधस्य छायया के ग्रन्थाः प्रादु
र्भूताः॥
उ० - सर्वाणि वैष्णवपुराणानीतिहासः पञ्चरात्रादीनि

...श्रौ। ...कीनात

मैक... ...ते॥

प्र०१- मंत्रब्राह्मण के अर्थज्ञान से यह पुरुष मेध सब हिंस...
से शून्य निश्चय होता है क्योंकि उसमें पर्यग्नि कृत पुरुष छोड दिये
जाते हैं फिर किस कारण से संसारी मनुष्य हिंसा परायण दीखते हैं

उ०१- दोही प्रकार की सृष्टि है दैवी १ आसुरी २ विद्वान देवता हैं
प्राण पोषक मोक्षोपाय रहित मनुष्य असुर हैं वेदों में दो अर्थ जान
पडते हैं अपरोक्ष १ परोक्ष २ विद्वान् परोक्ष अर्थ को मानते हैं क्यों
कि वे परोक्ष कामा हैं असुर तो अपरोक्ष अर्थ में मोह को पाते हैं प
रोक्ष अर्थ ही मुख्य और परमेश्वर का सम्मत है ब्राह्मण में सर्वत्र प
रोक्ष अर्थ की श्रुतियां विद्यमान हैं॥

प्र०२- परोक्ष ज्ञान से शून्य जो मनुष्य हिंसात्मक यज्ञ को श्रद्धा से
करते हैं वे किस फल को पाते हैं॥

उ०२- पुरुष मेध में तो सब परोक्ष अनुभव होता है उस कारण अ
न्यथा कर्त्ता मनुष्य पाप को ही करता है कुछ भी फल नहीं पाता कि
न्तु उभय भ्रष्ट होता है सब प्राणी पशु हैं और परमेश्वर पशुपति है
परमेश्वर से प्रादुर्भूत पशु उसी में स्थित होकर अन्त पर उसी में लय
हो जाते हैं उसी प्रकार यजमान पुरुष मेध यज्ञ में महापुरुष को ज्ञानचक्षु
से देखकर परमहंस होता है यज्ञों में पुरुष मेध ही उसके दर्शन का
उपाय है॥

प्र०३- इस पुरुषमेध की छाया से कौन ग्रन्थ प्रकट हुए-

उ०३- सब वैष्णव पुराण इतिहास पंचरात्र आदि तंत्र उससे प्र-

[illegible] रस्ति [illegible] वता [illegible] ज्ञान [illegible] प्रमीण

[illegible] पञ्चरात्र [illegible] स्य कार्या [illegible] जना [illegible] ति

[illegible] - रात्रं च ज्ञान वंचन ज्ञानं पञ्च विधं स्मृतम् तेनेदं प

ञ्चरात्रं च प्रवदन्ति मनीषिणः १ ज्ञानं परमतत्वं च जन्ममृ

त्युजरापहम् ततो मृत्युंजयः शम्भुः सम्प्राप कृष्णावक्त्रतः २

ज्ञानं द्वितीयं परमं मुमुक्षूणां च वाञ्छितम् परं मुक्तिप्रदं शुद्धं

यतो लीनं हरेः पदे ३ ज्ञानं शुद्धं तृतीयं च मङ्गलं कृष्णभक्ति

दम् तद्दास्यदमभीष्टं च यतो दास्यं लभेद्धरेः ४ चतुर्थं यौगि

कं ज्ञानं सर्वसिद्धिप्रदं परम् सर्वस्वं योगिनां पुत्र सिद्धानां च

सुखप्रदम् ५ ज्ञानं च पञ्चमं मोक्तं तद्वै वैषयिकं नृणाम् विषये

विद्धचित्तं च सर्वमिन्द्रिय सेवनम् ६ प्रथमं सात्विकं ज्ञानं द्विती

यं च तदेव च नैर्गुण्यं च तृतीयं च ज्ञानं च सर्वतः परम् ७ चतुर्थं

च राजसिकं भक्तास्तन्नाभिवाञ्छति पञ्चमं तामसं ज्ञानं वि

द्वांस्तन्नाभिवाञ्छति ८ यथा निपीय पीयूषं न स्पृहा चान्यव

स्तुषु पञ्चरात्रमभिज्ञाय नान्येषु च स्पृहा सताम् ९ सर्वार्थ

ज्ञानबीजं चाप्यज्ञानान्धप्रदीपकम् वेदसारोद्धृतं तत्वं सर्वेषां

सम्भीप्सितम् ॥ १० ॥

प्र० ५ - पञ्चरात्रे धर्मशास्त्रं ज्ञान शास्त्रं च प्रवर्त्तते पुरुषमेधे कुत्रास्ति ॥

उ० ५ - पञ्चाध्याये धर्मशास्त्रं ज्ञानशास्त्रं चास्ति ज्ञानचक्षुषा द्रष्टव्यमिति ॥

प्र० ६ - पञ्चरात्रे श्रीराधाया माहात्म्यं वर्त्तते पुरुषमेधे

...आश्वत लंदम अश्वतिम ... ... भगवत्स

... स्वन्यवेदेषु कथयिष्यामः पुरुषमेध एव प... रात्र

थितं विस्तरस्त्वन्यवेदेषु कथयिष्यामः पुरुषमेध एवप... रात्र

स्यसूत्रमस्तीति ॥ भाषार्थः

प्र० ४-पंचरात्र में पंचरात्र शब्द का कोन अर्थ लिखा है ॥

उ० ४-रात्र का अर्थ ज्ञान लिया जाता है और वह ज्ञान पांच प्रकार का कहा इसी कारण ज्ञानी जन उस को पंचरात्र कहते हैं १ पहिला परमतत्वज्ञान है जो कि जन्म मृत्यु जरा का नाशक है इस कारण मृत्युञ्जय शिवजी ने उस को श्रीकृष्ण के मुख से प्राप्त किया २ दूसरा ज्ञान मुमुक्षुओं का वांछित शुद्ध और श्रेष्ठ मुक्ति का दाता है जिस के द्वारा हरि के पद में लीन होता है ३ तीसरा ज्ञान शुद्ध मंगल रूप अभीष्ट श्रीकृष्ण के दास्य और भक्ति का दाता है जिस के द्वारा हरि के दास्य भाव को पाता है ४ चौथा योग संबंधी ज्ञान है जो कि सर्व सिद्धि का दाता श्रेष्ठ योगियों का सर्वस्व और सिद्धों का सुखदाता है ५ पांचवां ज्ञान मनुष्यों का है ... कि विषय संबंधी विषय में बद्ध चित्त होना और सब इन्द्रियों का सेवन है ६ पहिला और दूसरा ज्ञान सात्विक है तीसरा सब से श्रेष्ठ निर्गुण सम्बन्धी ज्ञान है ७ चौथा राजसी ज्ञान है भक्त उस को नहीं चाहता है पांचवां तामसी ज्ञान है विद्वान उस को भी नहीं चाहता है ८ जैसे अमृत को पान करके दूसरी वस्तुओं में इच्छा नहीं होती उसी प्रकार पंचरात्र को जानकर दूसरे ग्रन्थों में सत्पुरुषों की इच्छा नहीं होती ९ यह पंचरात्र सर्वार्थ ज्ञान बीज है और अज्ञान रूप अंधकार का भी प्रदीपक है वेद से निकाला हुआ सार तत्व है और भले प्रकार सब का ईप्सित है ॥

[illegible] पञ्चम अध्याय में [illegible] तत्त्व और ज्ञान शास्त्र है [illegible]
देखना चाहिये॥

प्र० ६-पंचरात्र में श्रीराधाजी का महात्म्य है पुरुषमेध में कहां है
कहना चाहिये॥

उ० ६-श्रीश्चते लक्ष्मीश्चते इस मंत्र में श्रीराधाजी की भगवत् समीपता कही विस्तार तो दूसरे वेदों में कहेंगे पुरुषमेध ही पंचरात्र का सूत्र है॥

विज्ञानम

तद्विद्यात्। सर्वांल्लोकानात्मन्न धिषि सर्वेषु लोकेष्वात्मानमधाᳫं सर्वान्देवानात्मन्नाधिषि सर्वेषु देवेष्वात्मानमधाᳫं सर्वान्वेदानात्मन्न धिषि सर्वेषु वेदेष्वात्मानमधाᳫं सर्वान्प्राणानात्मन्नाधिषि सर्वेषु प्राणेष्वात्मानमधामित्यक्षिता वै लोका अक्षिता देवा अक्षिता वेदा अक्षिताः प्राणा अक्षितᳫं सर्वमक्षिताद्ध वा ऽअक्षितमुपसंक्रामत्यपपुनर्मृत्युं जयति सर्वमायुरेति य एवमेतद्वेद श० १२।३।४।११

इति

इति श्रीभृगुवंशावतंस श्री नाथूराम सूनु ज्वालाप्रसाद शर्म्म संगृहीते मूर्त्तिरहस्यस्य तृतीय भागे महापुरुष मूर्त्ति प्रतिष्ठा नाम चतुर्थोऽध्यायः॥४॥

शुभम्

...मध्य ... मूर्त्ति कीमातष्ट...

क़ीमत ३) डाकव्यय॥

श्रीमद्भगवद्गीता पंचभाष्य सहित

इसमें प्रथम श्लोक फिर पद फिर पदार्थ और उसके आगे नीलकंठ, शंकर, हनुमान, श्रीधर रामानुज के भाष्यों का भाषानुवाद है क़ीमत ५) रु० डाकव्यय ।-) है॥

महाभारत संस्कृत उर्दू अनुवाद सहित

इस उर्दू अनुवाद को गवर्नमेन्ट ने भी कालेज स्कूलों के लिये ख़रीदा है और उल्था में एक अक्षर भी नहीं छोड़ा है क़ीमत ५०) डाकव्य ३॥)

हरिवंश संस्कृत उर्दू अनुवाद सहित

यह महाभारत का १९ वां पर्व है यह महाभारत का भागवत है इसके पाठ से सन्तान धन और भगवत की प्रति होती है क़ीमत ८) डाकव्यय ॥)

हरिवंश केवल उर्दू

यह वही पूर्वोक्त उर्दू अनुवाद है इसमें संस्कृत नहीं है कीमत ४) डाकव्यय १) आना॥

अग्रोक्त

पुस्तकें भी विद्यमान हैं

भगवद्गीता संस्कृत उर्दू अनुवाद ॥)॥ ब्राह्मण गीता तथा ॥।-) विदुरप्रजागर संस्कृत भाषा ॥।-) सरल व्याकरण संस्कृत भाषा १॥-)॥ व्याकरण प्रभाकर पहला भाग संस्कृत १॥-)॥ तथा दूसरा भाग संस्कृत ३=) मूर्त्ति मार्त्तण्ड संस्कृत भाषा जिसमें वेद से मूर्त्ति सिद्धि की है ।=)॥ आर्याभास मत मर्दन सं० भाषा जिसमें गायत्री भेद लिखा है -)॥ सद्धर्मभ्रंश मुखचपेटिका जिसमें दो भाग के मध्य-

(उपनिषद)

रुद्री संस्कृत भाष्य ≡)॥ रुद्री भाषा भाष्य ≡) सर्वमेध सहस्र शीर्षी संस्कृत भाष्य ~)॥ सर्वमेध सहस्र शीर्ष भाषा भाष्य ~)॥ ईशावास्य संस्कृत भाष्य ~) ईशा वास्य भाषा भाष्य ~) चारों वेद के उपनिषद भाषा १॥≡)

मूर्त्तिरहस्य का तीसरा भाग

इसमें महापुरुष के मूर्त्ति की प्रतिष्ठा उपाधिलय द्वारा लिखा है और इसका पूजन आदि करके परमहंस पद का अधिकारी होता है॥ क़ीमत डाकव्यय सहित ≡)॥

सामवेद का भाष्य संस्कृत तथा भाषा

इसमें अधिदैव और अध्यात्म नाम दो अर्थ हैं मासिक विधि से छपता है ६ अंक प्रथम वर्ष के छपगये वार्षिक मूल्य डाकव्यय सहित ४॥≡) है.